e-ISSN:2582 - 7219

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH IN SCIENCE, ENGINEERING AND TECHNOLOGY

Volume 4, Issue 7, July 2021

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 5.928

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 7, July 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0407032|

सूर साहित्य में संसार के विभिन्न अप्रस्तुत और उनका रहस्य

डॉ० श्याम पाल मौर्य

प्रभारी एवं एसोसिएट प्रोफ़ेसर

हिंदी विभाग,

बरेली कॉलेज,बरेली,उत्तर प्रदेश।

बाह्यी स्थिति प्राप्त कर वही अनन्त और अखण्ड आनन्द प्राप्त कर सकता है जो जगत के मायिक स्वरूप को यथाथे रूप में भली भाँति हृदयंगम कर अपने तात्त्विक चिन्तन से प्राप्त निष्कषे नवनीत के अनुसार जीवन बनाकर कृतकृत्य हो जाता है। जीवन के इस चरमसाध्य को प्राप्त करने से पूवे इस मागे की जो बाध्यकारी शक्तियाँ है उनको तरना होगा। ब्रह्म, जीव, जगत और माया के रहस्यों को समझ कर ही यह चरम सौभाग्य प्राप्त किया जा सकता है। ईश्वर के अंश जीव को ब्रह्मभाव कब विस्मृत हुआ; यह कोई नहीं जानता लेकिन उसका आत्यंतिक लक्ष्य क्या है? यह सवेथा शास्त्र, वेद और आप्त जनों द्वारा सुनिश्चित किया जा चुका है। स्वयं भगवान श्रीकृष्ण श्रीमद्भगवद्गीता में यह स्पष्ट करते हैं -

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति।
समः सवेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम्।।

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम्।। [1]

आद्य शंकराचार्य जी कहते हैं "ब्रह्म सत्यं

जगन्मिथ्या।" सदा सवेत्र ब्रह्म की अद्वैत सत्ता है। उसके अतिरिक्त कहीं कुछ है ही नहीं लेकिन माया के आवरण के कारण हम जगत में नानात्व देखते हैं और उसमें फँसकर अपन चरम लक्ष्य से भटक जाते हैं। है तो सदा सवेत्र एक ही ब्रह्म तत्त्व, हम संसार की कल्पना कर व्यवहार में भ्रमित हो जाते हैं। जगत के मायामय स्वरूप को हिंदी

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 7, July 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0407032|

के सभी संत भक्त और कवियों ने अपनी अपनी वाणियों में यह ज्ञानामृत सवे सुलभ कर दिया है। जगत या संसार के स्वरूप समझाने के लिए उन्होंने अनेक प्रकार से इसके निगूढ़ रहस्य उद्घाटित किये हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने प्रभु की इस विचित्र सृष्टि के सम्बन्ध में अद्भुत बात कही है।

केसव! कहि न जाइ का कहिये।
देखत तव रचना विचित्र अति ,समुझि मनहिमन रहिये।।
शून्य भीति पर चित्र ,रंग नहि तनु बिनु लिखा चितेरे।
धोये मिटे न मरै भीति, दुख पाइय इति तनु हेरे।।
रविकर नीर बसै अति दारुन ,मकर रुप तेहि माहीं।
बदन हीन सो ग्रसै चराचर ,पान करन जे जाहीं।।
कोउ कह सत्य ,झूठ कहे कोउ जुगल प्रबल कोउ मानै।
तुलसीदास परिहरै तीनि भ्रम , सो आपुन पहिचानै।।

किन्तु इस रहस्य को कोई समझ भी लेता है तब भी यह माया की शक्ति को प्रभु कृपा बिना कोई तर नहीं सकता :-

सो दासी रघुबीर कै समुझें मिथ्या सोपि।
छूट न राम कृपा बिनु नाथ कहउँ पद रोपि॥ [2]

क्योंकि

काल धमे नहिं ब्यापहिं ताही। रघुपति चरन प्रीति अति जाही॥
नट कृत बिकट कपट खगराया। नट सेवकहि न ब्यापइ माया॥ [3]

हरि माया कृत दोष गुन बिनु हरि भजन न जाहिं।
भजिअ राम तजि काम सब अस बिचारि मन माहिं॥

सन्त प्रवर तुलसीदास जी की बात बहुत व्यावहारिक और कल्याणकारी है- स्वल्पाधिक यही बात सभी सन्तों, ज्ञानियों, योगियों एवं भक्तों ने स्वीकार की है।

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 7, July 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0407032|

जो जगत का स्वरूप संसार नाम से अभिहित किया गया है वह मायिक-सत से विलक्षण है। साधक भक्त के जीवन में या जो भी इस संसार के भ्रमात्मक स्वरूप से छूट कर परम सौभाग्य पाकर कृतकृत्य होना चाहता है, उसे संसार में वैसे ही व्यवहार कर भक्ति करनी चाहिए जिसके विषय में हिंदी के सभी भक्त कवियों ने मानव का मार्गदर्शन किया है। संसार को वे अनेक अप्रस्तुतों के माध्यम से समझाते हैं। जगत की प्रत्येक विशेषता को वे इस माध्यम से ऐसे अभिव्यंजित करते है कि उनकी भक्ति और काव्यकला का मन भक्त हो जाता है।

कविकुल मौलिमणि महाकवि सूर के अद्वितीय काव्य में 'संसार' के अनुपम अप्रस्तुतों का विशद निरूपण समझकर किसी देश काल और परिस्थिति का मानव आत्मकल्याण कर सकता है। उनके काव्य के वे अप्रस्तुत एक एक कर विश्लेषित कर हम उसका नवनीत प्राप्त करेगें।

आत्म स्वरूप की विस्मृति का कारण बताते हुए वे एक पद में कभी संसार को काँच का भवन, कभी स्वप्न, कभी कूप कहकर सावधान करते हैं।

अपुनपौ, आपुन ही बिसरयौ।
जैसैं स्वान काँच-मंदिर मैं, भ्रमि-भ्रमि भूंके परयौ।।
ज्यौं सौरभ मृग-नाभि बसत है, द्रुम-तृन सूंघे फिरयौ। ज्यौं सपने मैं रंक भूप भयौ, तसकर आरे पकरयौ।।
ज्यौं केहरि प्रतिबिंब देखि कै, आपु न कूप परयौ।
जैसैं गज लखि फटिकसिला मैं, दसनानि जाइ अरयौ।।
मकेट मूंठि छाँड़ि नहिं दीनी, घर-घर-द्वार फिरयौ।
सूरदास नलिनी को सुवटा, कहि कौनै पकरयौ।। [4]

इस पद में काँच भवन, वन, स्वप्न, कूप, स्फटिक शिला और नलिनी के उपमान देकर जीवन की व्यावहारिक भ्रांति को हर बार भिन्न भिन्न अस्प्रस्तुत दिये हैं जिनमें जीवन के लगभग अधिकांश पक्ष की मार्मिक व्यंजना है। जीव श्वान की भाँति संसार में अपने ही जैसे प्राणियों के मोह में जीवन की हानि कर लेता है। सूखी अस्थि को चबाने वाले श्वान के मसूड़ों से रक्त निकलता है वह समझता है हड्डी से रक्त निकल रहा है। पञ्चमहाभूतों के अपने जैसे ही विषयों की मिथ्या ममता और अहंता को सच समझकर व्यवहार करता है। एकाग्र होने के कारण अपने ही स्वरूप का प्रातिभासिक सुख प्राप्त होता है जो क्षणभंगुर और आपात रमणीय होता है। संसार में आसक्त मानव मन अपनी ही छाया के प्रति आकर्षित होकर पतन के कूप में गिर जाता है। अज्ञान का अन्धकार नकारात्मक

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 7, July 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0407032|

नीचाई में गिरा देता है। ईश्वर का अंग स्वरूप होकर भी भ्रमवश सिंहवत कूप में कूद पड़ता है। अपनी सम्पूर्ण शक्तियों को नष्ट कर देता है। बन्दर की भाँति आसक्ति के बन्धन को मनुष्य स्वयं नहीं छोड़ता है, समझता है किसी ने पकड़ रखा है। नलिनी पर बैठा तोता भी भ्रम के कारण समझता है किसी और ने उसे पकड़ लिया है लेकिन छोड़ता स्वयं नहीं, इसीलिए जन्म जन्मान्तर दुःख भोगता है।

सूरदासजी संसार को सागर का उपमान देकर संसार से जीव के तरने की प्रक्रिया की कठिनाइ बताते हैं भ्रम का समुद्र अत्यन्त विशाल है और तूफान, जल की अतलता तथा लोभ की लहरें अत्यन्त दुर्गम है। प्रभु की कृपा ही बार-बार संसार के मोह से निकाल सकती है। सांग रूपक के माध्यम से सूर कहते हैं -

अब कैं नाथ, मोहिं उधारि।
मगन हौं भव-अंबुनिधि में, कृपासिंधु मुरारि।।
नीर अति गंभीर माया, लोभ-लहरि तरंग।
लिए जात अगाध जल कौं गहे ग्राह अनंग।।
मीन इंद्री तनहिं काटत, मोट अघ सिर भार।
पग न इत उत धरन पावत, उरझि मोह सिवार।।
क्रोध-दंभ-गुमान-तृष्ना पवन अति झकझोर।
नाहिं चितवन देत सुत-तिय, नाम-नौका ओर।।
थक्यौ बीच, बिहाल, बिहवल, सुनौ करुना-मूल।
स्याम भुज गहि काढ़ि लीजै सूर-ब्रज कैं कूल।।

सूरदास जी यहाँ प्रभु से प्राथेना करते हैं कि हे प्रभु विगत असंख्य जन्मों में जराजन्ममृत्यु जन्य अनेक कष्टों से भरे इस जगत में मैं दारूण दुःख झेलता रहा हूँ, इस बार तो मेरा उद्धार कर ही दीजिए क्योंकि संसार समुद्र में मैं पूर्णतया डूबा हुआ हूँ, आप भी कृपा के समुद्र हो। 'जाने खग खग ही के भाषा' संसार समुद्र की भ्रमात्मकता आप ही दूर कर सकते हो । माया के गंभीर जल, लोभ की तरंगे काम रूपी मकर की प्रबल शक्ति, इंद्रियों की बार बार विकलता की पीड़ा, पापों का गुरु भार, मोह को शैवाल, क्रोध- दम्भ-गुमान तृष्ना के तूफान, पुत्र स्त्री की आसक्ति को केवल प्रभु ही दूर कर सकते हैं। संसार के इन भयानक बाधक तत्वों को बड़ी कुशलता के साथ दूर किया जा सकता है यदि प्रभु नाम की नौका पर हम आरूढ़ हो जायें।

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 7, July 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0407032|

सूरदासजी इस पद में संसार का जो अप्रस्तुत विधान करते हैं वह बड़ा ही व्यावहारिक है। इस जगत में काम को मगरमच्छ के भयावह रूप कौतुक द्वारा व्यक्त किया गया है। काम भी मगरमच्छ की भाँति माया के गम्भीर जल में अत्यन्त प्रबल हो जाता है। जैसे ही वह भक्षण करने को मुख फैलाता है उसकी आँखें बन्द हो जाती है। इसीलिए जो कामी होता है कामातुर अवस्था में उसे भला बुरा कुछ नहीं दिखता। कहा गया है 'कामातुराणां न भयं न लज्जा।' विषय रस की अभ्यासी इन्द्रियां बार बार विकल करती हैं, जिसके कारण व्यक्ति भजन नहीं कर पाता और भ्रम से कल्पित संसार को सच समझकर राग-द्वेष वश होकर कर्म कर पापों का भारी बोझ सिर पर धारण कर लेता है। जो आगे चलकर प्रारब्ध बनकर भजन की राह रोकता है। सांसारिक वस्तुओं और सम्बन्धों की आसक्ति में स्वयं ही विवश समझता है। समुद्र की शैवाल की भाँति मोह त्याग और साधना के मार्ग पर पूरे मन से समर्पित नहीं होने देता। क्रोध, दम्भ, अभिमान और इच्छा तूफान की भाँति झकोरों में दोलित करते रहते हैं। पुत्र कलत्र नाम स्मरण नहीं करने देते। मोह इन्हीं सम्बन्धों में सर्वाधिक घनीभूत होता है। महाकवि तुलसी भी इसी प्रकार मानव को सावधान करते हैं -

सुत वनितादि जान स्वारथ-रत न करू नेह सबही ते ।
अन्तहु तोहि तजेगे पामर तू न तजै अबही ते।। [5]

अन्यत्र भी सच कहा गया है-

चलन चलन सब कोई कहे बिरला पहुँचे कोय।
एक कंचन एक कामिनी दुर्गम घाटी दोय।।

महाकवि सूर का संसार रूपक प्रत्येक मानव के जागतिक जीवन की सच्ची झांकी प्रस्तुत कर प्रभु प्राप्ति के सन्मार्ग पर प्रेरित करता है। ब्रज वास का दृढ़ भक्ति संबल की याचना करते हुए सूर प्रभुसे अपनी शरणागति की अभय भुजाओं का आश्रय प्रदान करने हेतु प्राथेना करते हैं इस प्रकार यहाँ वे संसार की भयावहता ही नही बताते उससे उबरने का एकमात्र उपाय भगवद्भक्ति को भी निर्देशित करते हैं।

सूरदास जी अपने कई पदों में भगवान के प्रेमलोक से तुलना करते हुए संसार रूपी विषय रस से गन्दी छोलर (गंदा छोटा तालाब) को छोड़कर भगवान प्रेम सागर लोक में प्रस्थान हेतु प्रेरित करते हैं। संसार का कोई भी अप्रस्तुत हो, मोह व अज्ञान ग्रस्त मानव की यथार्थ दशा का अनुपम चित्र साकार कर देता है। कबीर, तुलसी आदि संतों और भक्तों ने संसार को धोखा अथवा प्रबंचता ही कहा है।

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 7, July 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0407032|

महाकवि 'सूर' संसार की उपमा सेंभल (शाल्मली) से भी देते हैं ।

धोखै ही धोखै डहकायौ।
सुमुझि न परी विषय-रस गीध्यौ, हरि-हीरा घर माँझ गँवायौ ।
ज्यौं कुरंग जल देखि अर्वाने कौ, प्यास न गई चहुँ दिसि धायौ।।
जनम जनम बहु करम करम किए हैं, तिनमें आपुन आप बधायौ।
ज्यौं सुक सेमर सेव आस लगि, निसिबासर हठि चित्त लगायौ।
रीत्यौ परयौ जबै फल चाख्यौ, उड़ि गयो तूल, ताँवरौ आयौ।
ज्यौं कपि डोर बाँधि बाजीगर, कन- कन कौं चौहटैं नचायो।
सूरदास भगवंत - भजन बिनु, काल व्याल पै आपु डसायौ।। [6]

संसार को सेमल कहने का प्रयोजन है उसकी प्रवंचनामयी स्थिति। तोता सेंभल के फूलों के आपात रमणीय आकर्षण में फँसकर उसके फल को चखने हेतु और उसके फल के रस का स्वाद लेने हेतु प्रतीक्षा करता है लेकिन फल पकने पर जब चोंच का प्रहार करता है, उसमें रस नहीं होता शुष्क रूई निकलती है। अन्ततः उसको धोखा मिलता है, इसी प्रकार संसार के मिथ्या विषयों और सम्बन्धों में मनुष्य को भी धोखा होता है। जीवन की अवधि व्यर्थ बीत जाती है। भजन के मुक्ति मुक्ति लक्ष्य से वह वंचित हो जाता है। 'सूर' ने प्राणिमात्र को सावधान कर भक्ति में डूबने का सत्परामर्श दिया है।

भक्त वर सूरदास संसार (जगत) को चौसर का भी उपमान प्रदान करते है जिसमें जीव का जीवन अन्ततः पराभव को ही प्राप्त करता है।

"चौपारि मढे चहुँ जुग बीते।"

अन्ततः कविकुल शिरोमणि सूरदास बार बार बहुविध संसार की मिथ्या भ्रान्ति को गहराई के साथ समझाकर प्रभु की अभय दायक शरणागति ग्रहण करने का आग्रह कर करुणा करते हैं।
ईशोपनिषद् में मन्त्र है -

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ।।

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 7, July 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0407032|

इस अनुभूति के पावन लक्ष्य को प्राप्त करने और दुर्लभ भक्ति गौरव पर आरूढ़ होने के लिए संसार के मिथ्या मायिक स्वरूप को संतो और भक्तों की अमृतवाणी का का परम पीयूष को पचाना होगा।

संदर्भ

1). श्रीमद्भगवद्गीता- 18.54,18.55
2). रामचरित मानस - उत्तरकाण्ड 271 (ख)
3). श्री रामचरितमानस - उत्तरकाण्ड - 6/04(क)
4). सूरसागर - द्वितीय स्कन्ध
5). विनय पत्रिका - पद सं० -१२८
6). सूरसागर- प्रथम स्कन्ध- ३२६

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor
Impact Factor: 5.928

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

निस्केयर NISCAIR

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

IN SCIENCE, ENGINEERING AND TECHNOLOGY

9710 583 466 9710 583 466 ijmrset@gmail.com

www.ijmrset.com